वीरेन्द्र आस्तिक

पर्वत पर आए

बहुत दूर पर्वत आए
बैठे हैं घर छोड़कर
शायद आज दिलों की दूरी
मिट जाए कुछ सोच कर

ऐसे समा गए हम दोनों
पर्वतीय बन–देह में
भूल गए हम, रूठे रूठे
भी थे अपने गेह में

कभी–कभी हम बातें करते–
हैं मुंह से मुंह जोड़कर

कभी–कभी तो कई महीने
तरस गए जिस बात को
कह देती सतरंगी फुहारें
छू कर गोरे गात को

आज प्यार का स्वाद मिला है
भीगे वस्त्र निचोड़ कर

उजरी बदरी हरे पहाड़ों–
के सीने पर पसर गई
घाटी–ताल नाव पे जोड़ी
देख–देख कर सिहर गई

नाच उठे अन्तर के घुंघरू
सारे बन्धन तोड़कर।

तुम क्या आए

तुम क्या आये
समय
वही जो रूखा–रूखा था,
गीला–गीला है

चढ़ी धूल
वर्षा से
भीग, धरा पर आई
पत्ती–पत्ती
धुल–धुल
धूप खिली, लहराई

मन का अम्बर भी
कुछ–कुछ उजला
कुछ–कुछ नीला है

इस क्षण
कुछ भी कह दो
मन पर खुद जाएगा
युग जिसको
भूले तो
भूल नहीं पाएगा

इस क्षण
मन भावुक
जैसे कोई
नग चमकीला है।

सम्पर्क–
एल–60, गंगा बिहार
कानपुर–208010 (उ.प्र.)
मो.–09415474755